यदुनन्दन प्रद्युम्न व नृपति धृति

श्रीश्रीमाँ सर्वाणी

विश्वविजय के लिए बहिर्गत हो यदुनंदन प्रद्युम्न दुंदुभिनाद सहित मिथिला नगरी में आगत हुए। दूर से स्वर्णकुंभ शोभित अत्युच्च सुवर्ण सौधयुक्त मिथिलापुरी देखकर उन्होंने उद्धव से जिज्ञासा किया – ''हे मंत्री! सम्प्रति मैं जो पुरी देख रहा हूँ यह किसकी हैं? यह बहु सौध सुशोभित होकर भोगवतीपुरी की तरह विराज रही है।'' उद्धव ने कहा – ''हे प्रद्युम्न! यह जनक की पुरी है; इसका नाम 'मिथिला' है। इस मिथिलापुरी के राजा हरिप्रिय महाभागवत् कवि 'धृति' है; वे निखिल धर्मपालकगणों में श्रेष्ठ हैं एवं श्रीकृष्ण के इष्ट स्वरूप है। इनके पुत्र बहुलाश्व बाल्यकाल से ही हरिभक्त हैं; इनको दर्शन देने के लिए भगवान स्वयं यहाँ आगमन करेंगे। भगवान श्रीकृष्ण द्वारका में रहते हुए भी राजतनय बहुलाश्व व द्विज श्रुतदेव को सर्वदा स्मरण करते रहते हैं। अतएव, इस नगरी को जय करने में देवराज भी समर्थ नहीं हैं, तो मनुष्य की बात ही क्या हैं? धृति ने भी परम भक्ति द्वारा श्रीकृष्ण को वश में किया हैं।'' यह बात सुनकर प्रद्युम्न ने नृपति धृति के भक्ति-परीक्षार्थ उद्धव को शिष्य के छद्मवेश में लेकर धृति का दर्शन करने आए। सर्वप्रथम उन्होंने उद्धव के साथ मिथिला नगरी का दर्शन किया। उन्होंने देखा – वर्म शस्त्रधारी वीरगण माला और तिलक से शोभित है, सभी माला द्वारा कृष्णनाम जप कर रहे हैं। गृहादि के नीवँ

पर गदा, पद्म, दशावतार चित्र, शंख व चक्र चिह्न अंकित है एवं प्रत्येक प्रागंण में तुलसी-मंदिर विद्यमान है। और अधिकतर यह देखा गया कि वहाँ के सब मनुष्य माला-तिलक युक्त है, सभी कुंकुमांकित द्वादश तिलक द्वारा विभूषित, गोपी-चंदन से चर्चित व मुद्राद्वारा चिह्नित है; शान्त कलेवर विप्रगण ऊर्ध्वपुंड्रधारी भी हरि-मंदिर में चित्रित है। वे सब ललाट पर गदा मुद्रा व हरिनाम के ऊर्ध्वपुंड्र, भुजद्वय में चक्र-शंख-कमल-कूर्म एवं मत्स्य, मस्तक पर धनुर्वाण, हृदय में खड्ग-मुषल और हल चिह्न धारण किये हुए है। अनन्तर प्रद्युम्न ने देखा – किसी-किसी स्थल पर मानवगण भागवत् सुन रहे हैं, कोई-कोई भारत का इतिहास और हरिवंश श्रवण कर रहे हैं। फिर कोई सनत्कुमार-वशिष्ठादि के धर्मसंहिता पाठ कर रहे हैं और सर्वप्रकार पुराण शास्त्रादि की कथा सब मनुष्यगण विभिन्न स्थल पर संघबद्ध भाव में एकत्रित होकर मनोयोग पूर्वक सुन रहे हैं। कोई-कोई मुहुर्मुहुः ''राधाकृष्ण, राधाकृष्ण'' बोल रहे हैं, फिर कोई-कोई हरिकीर्तन में तत्पर होकर नृत्यगीत में मग्न है! जनगण मंदिरों में मृदंग व तालवाद्य युक्त कांस्य एवं वीणा के मधुर स्वर समन्वित मनोहर कृष्ण-कीर्तन सुन रहे हैं। नवलक्षण युक्त जो प्रेमलक्षणा भक्ति, मिथिला के घर-घर में है वह जनगण कर्तृक अनुष्ठित होती है। भगवान प्रद्युम्न ने इस प्रकार पुरी का अवलोकन करके शीघ्र ही राजद्वार पर आते हुए मिथिलापति का दर्शन किया।

मैथिलेश्वर की सभा में तब नारद, वेदव्यास, शुकदेव, याज्ञवल्क, वशिष्ठ व गौतम प्रभृति मुनिगण उपस्थित थे। इसके अलावा साक्षात् वेद मूर्तिधारी हरि परायण धर्मवक्ता और अन्यान्य मुनिगण भी वहाँपर उपस्थित थे। राजा धृति भक्तिपूर्ण भाव से नतशिर होकर नित्य बलराम की पादुका पूजा करते थे एवं वे मुक्तिप्रद कृष्ण-बलराम का नाम जप करते थे। ब्रह्मचारी वेश में सशिष्य सभा-मध्य उन सब को प्रवेश करते हुए देखकर नृपति धृति ने उठकर सर्वप्रथम सभी को प्रणाम किया एवं तत्पश्चात् पाद्यादि द्वारा यथाविधि पूजा करके करजोड़ कर उनके सम्मुख जाकर खड़े हो गए। नृपति धृति ने कहा – ''आज मेरा जन्म सफल और मेरा मंदिर पवित्र हो गया। आप के आगमन से देव ऋषि व पितृगण मेरे प्रति तृप्त हुए हैं। हे भगवन्! भवादृश निर्विकल्प समदर्शी साधुगण दीनजन के परम मंगलार्थ वसुंधरातल पर विचरण करते रहते हैं।'' ब्रह्मचारी ने कहा – ''हे राजन्! तुम धन्य हो, तुम्हारी मिथिला नगरी धन्या है और विष्णुभक्ति परायण तुम्हारी प्रजागण भी धन्य है।'' धृति ने कहा – ''यह नगरी मेरी नहीं है, यह प्रजा भी मेरी नहीं है, धन भी मेरा नहीं है; पुत्र-पौत्र कलत्रादि जो भी है वह सब ही श्रीकृष्ण के है। असंख्य ब्रह्मांडपति परिपूर्णतम साक्षात् स्वयं भगवान श्रीकृष्ण गोलोकधाम में विराज करते हैं। वे पृथ्वी में वासुदेव, संकर्षण, पुरुषोत्तम प्रद्युम्न एवं अनिरुद्ध इन चतुर्व्यूह में विद्यमान हैं। हे ब्रह्मण, हे महामुने! मैंने कायमनोवाक्य से बुद्धि व इन्द्रियगण सह समस्त शुभकर्म उन में समर्पण कर दिये हैं।'' ब्रह्मचारी ने कहा –''तुम विष्णु भक्तगणों के मध्य श्रेष्ठ हो; तुम्हारी भक्ति से सन्तुष्ट होकर कृष्ण तुम्हें निश्चय ही एकत्व-मोक्ष प्रदान करेंगे।'' तब नृप धृति ने कहा – ''मैं भवादृश महात्मा कृष्ण भक्तगण का दास हूँ। अतएव हे ब्रह्मण! मैं एकत्वमुक्ति कामना नहीं करता हूँ, मेरी कोई कामना नहीं है।'' यह श्रवण कर ब्रह्मचारी ने कहा – ''तुम कामनारहित अहैतुकी भक्ति करते हो। अतएव तुम निर्गुण भक्तिभाव लक्षण सम्पन्न प्रेमलक्षणयुक्त परम भक्तिमान हो। साक्षात् भगवान प्रद्युम्न दिग्विजयार्थ बहिर्गत हुए हैं; परन्तु वे तुम्हारे गृह में क्यों नहीं पधारे हैं, यह बहुत ही संदेहास्पद है।'' यह सुनकर तब धृति ने कहा – ''भगवान प्रद्युम्न साक्षात् अन्तर्यामी हरि हैं, वे सर्वज्ञ सर्ववित् सनातन हैं। हे प्रभु! यदि वे सर्वत्र हैं, तो क्या वे यहाँ नहीं है?'' ब्रह्मचारी ने कहा – ''यदि तुम अपनी ज्ञानदृष्टि द्वारा यह सोचते हो कि कृष्ण तनय प्रद्युम्न यहाँ सर्वदा विद्यमान हैं, तब सर्वदर्शी प्रह्लाद की तरह तुम भी मुझे उस प्रद्युम्न को दिखाओ।''

तदनन्तर परम भागवत् नृपति धृति ने ऐसी बातें सुनकर अश्रुसजल नयन से गद्गद् वाक्यों में कहा – ''यदि धरणीतल में मैंने निष्काम हरिभक्ति की है तो कृष्ण नन्दन प्रद्युम्न मेरे सम्मुख प्रादुर्भूत हो। यदि मैं कृष्ण भक्तगण का दास हो सकूँ और मेरे प्रति उनकी कृपा रहे, तो मेरा मनोरथ पूर्ण हो जाएं। इस प्रकार भक्ति से गद्गद् सुदृढ़ वाक्य श्रवण कर कृष्ण-नन्दन प्रद्युम्न तत्क्षणात् ब्रह्मचारी वेश त्याग

कर सभी के समक्ष आविर्भूत हो गए एवं वह शिष्य तब हरिभक्ति परायण उद्धव हो गया। मेघकान्ति, पद्म पत्रवत् आयतनेत्र, दीर्घबाहु, विश्वमनोहर, पीताम्बर नील अलकावली द्वारा सुन्दर अलंकृत कमल वदन, अत्युज्ज्वल किरीट व कुंडलधारी कांची और अंगद से सुशोभित दिव्यदेहधारी उस अपूर्व माधुर्य मंडित कृष्ण तनय प्रद्युम्न को देखकर तब धृति नृपति ने साष्टांग अंजलिबद्ध-कर से बारंबार नमस्कार किया। तत्पश्चात् उन्होंने कहा – ''अहो! मेरा बहुभाग्य, मैं आज मेरे कुल के सहित धन्य हो गया हूँ।'' तब प्रद्युम्न ने उनको कहा – ''हे नृपसत्तम! तुम सत्य ही धन्य हो। मैं सम्प्रति तुम्हारे भक्तिभाव के परीक्षार्थ तुम्हारे निकट आया हूँ। हे मैथिलेश्वर! आज ही तुम मेरे सारूप्य को प्राप्त होओ। इहलोक में तुम्हारी विपुल बल, यश और कीर्ति हो।'' इसके बाद साधुगण के समक्ष धृतिकर्तृक पूजित होकर भक्तवत्सल प्रद्युम्न ने स्वशिविर की ओर गमन किया।

(गर्गसंहिता अबलम्बन से यह कहानी उद्धृत है)

–हिन्दी अनुवाद मातृचरणाश्रिता श्रीमती ज्योति पारेख